कामायनी में वर्णित समाज तथा अधुनातन भारतीय संस्कृति

डॉ. दिनेश कुमार गुप्ता

सारांश- अधुनातन युग हेतु 'कामायनी' का एक संदेश है कि व्यक्ति में जब तक इच्छा, क्रिया एवं ज्ञान का समन्वयन नहीं हो जाता तब तक व्यक्ति की बुद्धि भ्रमित ही रहेगी। इच्छा, क्रिया एवं ज्ञान के समन्वय के पश्चात् ही व्यक्ति आनन्द की प्राप्ति कर सकता है। मनु को अधुनातन मनुष्य का प्रतीक माना है। जब मनु को ज्ञान की प्राप्ति हुई तब इच्छा, क्रिया, ज्ञान का ही समन्वय हुआ। मनुष्य भी तभी आनन्द की प्राप्ति कर सकता है जब उसका हृदय एवं बुद्धि पक्ष का समन्वय हो। यह तभी सम्भव है जब व्यक्ति आनंदवाद की सार्थकता को समझ सके। इसी सार्थकता को कवि ने अंतिम सर्ग में समझाया है। 'कामायनी' भाषिक संरचना की दृष्टि से भी एक श्रेष्ठ महाकाव्य है।

बीज शब्द- कामायनी, समाज, अधुनातन, भारतीय, संस्कृति।

प्रस्तावना- साहित्कार अपने युग के सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक आदि परिवेशों से संस्कार ग्रहण करता है। कवि की समसामयिक परिस्थितियाँ तथा साहित्यिक प्रवृत्तियाँ कवि को प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से प्रभावित करती हैं। प्रसाद की 'कामायनी' भी प्रसाद के युगीन राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों से प्रभावित है। 'कामायनी' आधुनिक हिन्दी साहित्य के उत्कृष्ट महाकाव्य की श्रेणी में शामिल है। इसके नायक मनु का उल्लेख कई प्राचीन ग्रन्थों में मिलता है। 'कामायनी' की कहानी देव-सृष्टि के विनाश से प्रारम्भ होती है। देव-सृष्टि का विनाश प्रलय के कारण हुआ माना जाता है। देवता अपनी भोग विलासिता में इतने लिप्त हो गये थे कि उन्होंने सामाजिक मूल्यों, नियमों एवं मर्यादा का ध्यान नहीं रखा जिससे समस्त देव-सृष्टि जल में विलीन हो गयी। उनका समस्त वैभव उसी जल में विलुप्त हो गया। जयशंकर प्रसाद ने श्रद्धा एवं मनु के संयोग से मानव-विकास की कथा को इस काव्य का आधार बनाया है। इसी के माध्यम से उन्होंने युगदृष्टा के रूप में अनेक संदेश दिए हैं। कवि ने 'कामायनी' महाकाव्य को आधुनिक, उत्तराधुनिक युग एवं नवसंरचनावाद के संदर्भों से जोड़ा है। काव्य

में उनके द्वारा वर्णित घटनाएं और उनके परिणाम तत्कालीन समाज से अधिक प्रासंगिक अधुनातन युग में हैं। कवि ने अब से आठ दशक पूर्व ही वर्तमान समय में व्याप्त समस्याओं का चित्रण करके अपनी भावी पीढ़ी के मनुष्य को सचेत करने का प्रयास भी किया। वर्तमान समय के विज्ञानवाद, बुद्धिवाद, यन्त्रीकरण, भौतिकवाद, भोग-विलास, पर्यावरणीय असंतुलन तथा सब कुछ होते हुए भी असन्तोष और कुंठा की प्रवृत्ति आदि को कवि ने बुद्धिवाद का प्रभाव माना है। 'कामायनी' महाकाव्य में कवि ने मनु, श्रद्धा तथा इड़ा से जुड़े वैदिक, पौराणिक, ऐतिहासिक तथ्यों और कथानकों को जोड़ते हुए इस महाकाव्य का विस्तृत कथानक तैयार किया है, भारतीय साहित्य एवं संस्कृति में वेद एवं पुराणों का अपना एक विशेष महत्व है। 'कामायनी' के नायक मनु का उल्लेख वेद एवं पुराणों में मिलता है। इसका मिथकीय आधार महाकाव्य को प्रामाणिक तथा प्रभावशाली बनाता है।

राज्य व्यवस्था- 'प्रसाद' ने 'कामायनी' में तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था का जो वर्णन किया है, आधुनिक सामाजिक वातावरण उससे बहुत भिन्न नहीं है। 'कामायनी' काव्य आधुनिक युग की कृति है। यद्यपि 'प्रसाद' प्राचीन भारतीय संस्कृति के प्रेमी थे, तथापि 'कामायनी' में उन्होंने नवीन वैज्ञानिक उपलब्धियों को भी यथेष्ट महत्व दिया है। इसी तुलनात्मक सामंजस्य दृष्टि के कारण उनके इस काव्य को उत्कृष्ट स्थान प्राप्त हुआ है। प्रत्येक कलाकार अपने वंश की परम्पराओं, संस्कारों, युग की आर्थिक परिस्थितियों, समाज में प्रचलित धार्मिक मान्यताओं, सांस्कृतिक रीति-रिवाजों, नीतियों, देशकाल तथा पूर्ण प्रतिष्ठित साहित्यिक मान्यताओं से जाने-अनजाने में प्रभावित होता है, 'प्रसाद' भी अपनी समसामयिक परिस्थितियों और विचारधाराओं से प्रभावित थे। इसी प्रकार कामायनी के नायक मनु भी देव-सृष्टि के विलासिता पूर्ण जीवन से प्रभावित थे। 'कामायनी' में देव साम्राज्य-कालीन राजनैतिक व्यवस्था का वर्णन मिलता है। देव सृष्टि के राजा इन्द्र की शासन व्यवस्था अव्यवस्थित हो चुकी थी। प्रलय से उसका अन्त हो गया। राजा की शासन व्यवस्था यदि सुसंगत न हो और राजा ही विलासी हो जाये तो ऐसा राज्य उन्नति नहीं कर सकता है। मनु प्रलयोपरान्त भी उसी खोये हुए सुख की तलाश में भटकता रहता है।

तत्कालीन राजनैतिक व्यवस्था बिल्कुल चरमराई हुई थी। देव-सृष्टि में देवता और असुर सभी अपनी अधूरी आत्मसत्ता, देह तथा प्राण सत्य के उपासक थे। असुर समाज भी देह पूजने में व्यस्त था। देव-सृष्टि का विनाश इसी कारण हुआ, मनु प्रलय पूर्व स्थिति का विश्लेषण करता है -

''गया, सभी कुछ गया, मधुरतम सुर बालाओं का श्रृंगार;
उषा ज्योत्स्ना सा यौवन-स्मित, मधुप सदृश निश्चित विहार।
भरी वासना सरिता का वह कैसा था मदमत्त प्रवाह;
प्रलय-जलधि में संगम जिसका देख हृदय था उठा कराह!'' (चिन्ता सर्ग)

प्रलय के पश्चात् मनु देवसृष्टि की विलासी प्रवृत्ति को याद कर निराश होते हैं। तत्कालीन शिथिल राजनैतिक व्यवस्था में राजा एवं प्रजा दोनों ही सुरा एवं सुन्दरियों के मद में मस्त रहते थे। विलासी प्रवृतियाँ ही विध्वंस का कारण बनी, यह जानते हुए भी मनु अपनी इस कमजोरी पर काबू नहीं पा सके। उन सुखों के खो जाने से वे निराश हैं। इड़ा से मिलने के बाद मनु को एक बार पुनः राज्यसत्ता को संभालने का अवसर प्राप्त हुआ। उन्होंने सारस्वत प्रदेश की महारानी इड़ा के सहयोग से इस प्रदेश का पुनर्निर्माण किया। इड़ा बुद्धिवादी प्रवृत्ति की नारी थी, जिसकी राजनैतिक व्यवस्था अत्यन्त सुदृढ़ और आदर्श थी। इड़ा ने मनु के सुझावों के आधार पर राज्य प्रतिष्ठित किया। सुख समृद्धिमय नगर बसाये और सुख के सभी साधन एकत्र किये। दोनों ने मिलकर सारस्वत नगर की राजनैतिक तथा समाजिक व्यवस्था संचालित की। 'कामायनी' की भूमिका में 'प्रसाद' ने मनु को देवों से विलक्षण मानवों की संस्कृति, प्रतिष्ठित करने वाला कहा है। मनु द्वारा जो राजनैतिक व्यवस्था बनाई गई, वह देव सृष्टि से ही प्रभावित थी। निश्चित ही, वह सामन्ती, विलास-प्रिय शासक बने। उनकी शासन व्यवस्था में रूप-धर्म और शासन सत्ता का पूर्ण उपभोग हुआ।

'प्रसाद' के समय में देश अंग्रेजों का गुलाम था, ऐसे में निश्चय ही तत्कालीन वातावरण का उन पर गहरा प्रभाव पड़ा, जिसकी झलक 'कामायनी' की राजनैतिक व्यवस्था में स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। सामन्त वर्ग अत्यन्त विलासी था। उनकी

विलासप्रियता ही 'कामायनी' में प्रतिबिम्बित होती है। गजानन माधव मुक्तिबोध ने अपनी रचना 'कामायनीः एक पुनर्विचार' में कहा है कि 'प्रसाद' को एक जमाना यह भी देखना पड़ा, जब इस सामन्त वर्ग के विलास-वातावरण को जीवन में विशेष स्थान न मिल पाया। सामंतवर्गीय विलास-वातावरण जीवन से ही तिरोहित हुआ, और उसकी स्मृति उनके हृदय में कुण्डली मारकर बैठी रही।'' सामन्तवादी प्रवृत्ति सत्ताधारी को केन्द्र मानकर चलती है। इस व्यवस्था के अनुसार राजा ही सर्वोपरि होता है। व्यक्तिवादी मूल्य कहीं महत्व नहीं रखते। यह विचारधारा व्यक्ति एवं सत्ता के बीच द्वन्द्व उत्पन्न कर देती है। फलतः इच्छा एवं क्रिया के बीच झगड़ा होना स्वाभाविक है। 'कामायनी' में वर्णित राजनैतिक व्यवस्था के सन्दर्भ में यह कहना अनुचित न होगा कि 'प्रसाद' की विचारधारा पर सामन्ती प्रभाव के साथ-साथ सामन्तवाद के विरूद्ध प्रतिक्रिया भी उद्वेलित हो रही थी।

तत्कालीन समाज में सामन्ती सभ्यता का दबदबा बना हुआ था, जिसका जीर्णोद्धार होना सम्भव नहीं था। अवध की नवाबी, बड़े-बड़े ताल्लुकेदारों की रँगरेलियाँ, तथा अपने खानदान का वह पूर्वकालीन वैभव; जिसमें विलासिता पलती थी, सब गये। लेखक का नवीन अन्तर्मुख छायावादी-व्यक्तिवादी मन उस विलासिता की भीतरी प्रवृत्तियों की प्रक्रियाओं को लिए, नवीन यथार्थ से-जिस प्रकार भी हो सके-टक्कर लेने लगा। फलतः नवीन प्रश्न उत्पन्न हुए, नयी समस्याएँ मिली। तत्कालीन जागरूक चिन्तकों को प्रतीत हो चुका था कि, सामंती व्यवस्था देश की उन्नति के लिए एक घातक समस्या है। सारस्वत नगर की प्रजा का विद्रोह उसी व्यवस्था के विरोध स्वरूप प्रकट किया गया है। मु० प्रेमचन्द ने 'शतरंज के खिलाड़ी' जैसी कहानियों से विलासिता के खतरे के प्रति इंगित किया तो 'प्रसाद' ने 'कामायनी' में भोग-विलास और कर्तव्य विमुखता के प्रलयंकारी दुष्परिणामों का वर्णन किया।

मुक्तिबोध लिखते हैं कि, "'प्रसाद' के व्यक्तित्व, उनके काव्य, उनके जीवन तथा 'कामायनी' में वर्णित देव सभ्यता के चित्रों के सामाजिक-ऐतिहासिक विश्लेषण से हमें इस निष्कर्ष पर पहुँचना ही पड़ा है कि देव सभ्यता वह ह्रास कालीन सामंती सभ्यता है, जो

ब्रिटिश साम्राज्यवादी पूँजीवाद के धक्कों से, विश्व पूँजीवाद के भूकम्पों से, धराशायी हो गयी। निश्चय ही इस सामंती सभ्यता के लिए प्रलय ही था। पूँजीवाद के देशी और विदेशी प्रहार उसके लिए प्रलय के समान ही रहे जिनकी युगान्तरकारी शक्तियों पर उसका कोई जोर न था।'' 'कामायनी' में इस प्रकार की राजनैतिक व्यवस्था का विरोध हुआ है। यदि प्रजा सत्ताधारियों द्वारा प्रताड़ित की जाती है तो विद्रोह हो जाता है। यही परिणाम भारत में ब्रिटिश सत्ता का भी हुआ। भारतीय जनता ने पराधीनता की बेड़ियाँ तोड़ दी तथा अंग्रेजी सत्ता का सफाया हो गया था। कभी भी सत्ता दबा कर नहीं चलाई जा सकती है। प्रजा को पुत्रवत प्रेम करने से ही राजनैतिक व्यवस्था चल सकती है। जिसका परिणाम हम सदियों से देखते चले आये हैं। यदि शासक कुशल राजनीतिज्ञ होने के साथ ही प्रजा के प्रति संवेदनशील प्रवृत्ति का भी होगा तो उसका शासन चिरकाल तक सफल रहेगा सफल शासन हेतु शासक का पहले स्वयं अनुशासित होना आवश्यक है। जब तक प्रजा तथा राजा दोनों तत्कालीन सामाजिक नियमों में चलते हैं तब तक राजनैतिक व्यवस्था एकदम सुचारु रूप से संचालित होती है, परन्तु ज्योंही राजा अपनी सत्ता का मद दिखलाता है त्योंही व्यवस्था छिन्न भिन्न हो जाती है। 'कामायनी' का यह प्रेरक सन्देश है। इसके द्वारा 'प्रसाद' यह सिद्ध करना चाहते हैं कि, नियमों के उल्लंघन से ही सामाजिक तथा नैतिक मूल्य विघटित होते हैं। नियमों का उल्लंघन ही विलासिता को जन्म देता है और यही पतन का संकेत देता है। आधुनिक समाज में फैली अराजकताओं का कारण भी नियमों का उल्लंघन, नैतिक मूल्यों की अवहेलना है। 'कामायनी' का संदेश इसी आधुनिक समाज के लिये है। इड़ा तथा मनु द्वारा सारस्वत नगर के शासन की नींव एक मजबूत आधार पर डाली गई है, जिसका सफल संचालन भी हुआ। उनकी राजनैतिक व्यवस्था आधुनिक व्यवस्था के समतुल्य थी। सम्पूर्ण राज्य-वैभव से परिपूर्ण नवीनतम सुख-सुविधा पूर्ण राज्य था। समाज की व्यवस्था सुचारु बनाये रखने हेतु इड़ा द्वारा कार्य विभाजित किये गये। आगे जा कर समाज उसी के अनुसार चार वर्गों में विभाजित हो गया। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र की यह वर्ण व्यवस्था तभी से

चली आ रही है। प्रारम्भ में जो सिर्फ एक व्यवस्था थी, आगे जाकर वही सामाजिक भेद-भाव जनित द्वेष की कारण बन गई -

"अग्रसर हो रही यहाँ फूट, सीमाएं कृत्रिम रही टूट;
श्रम भाग वर्ग बन गया जिन्हें, अपने बल का है गर्व उन्हें;
नियमों की करनी सृष्टि जिन्हें; विप्लव की करनी वृष्टि उन्हें।"(दर्शन सर्ग)

सामाजिक व्यवस्था- 'कामायनी' में वर्णित सामाजिक जीवन वर्तमान सामाजिक जीवन के समतुल्य है। देव सृष्टि में वर्णित सामाजिक जीवन बहुत व्यवस्थित नहीं दिखायी देता। उस समाज में मानवीय मूल्यों का अनुकरणीय निर्वाह दृष्टिगोचर नहीं होता। प्रेम तथा सौहार्द की भावना एक या दो पात्रों में ही दृष्टिगोचर होती है। उदात्त मानवीय मूल्यों का मनु में भी अभाव है। सामाजिक जीवन मानवीय मूल्यों से सुदृढ़ होता है। जिस समाज में ये मूल्य जितने अधिक विकसित होंगे, वह समाज उतना ही उत्कृष्ट कोटि का होगा। यदि सामाजिक मूल्य विघटित होंगे तो समाज में विघटन एवं पलायनवादी प्रवृतियाँ बढ़ती हैं। व्यक्ति आत्मिक सन्तोष से वंचित रह जाता है और संसारिक भोग विलास के सम्पूर्ण साधन प्राप्त करने के बाद भी मानसिक रूप से अतृप्त और अशान्त रहता है। भोगवादी दृष्टि के कारण मनु को भी कहीं शान्ति नहीं मिल पा रही थी; इसलिए वह तब तक भटकता रहा जब तक वह भौतिकता से आध्यात्मिकता की ओर उन्मुख नहीं हुआ। अधुनातन समाज की भाँति 'कामायनी' के समाज में भी धार्मिक क्रियाकलाप तो होते हैं; किंतु वे रजोगुण प्रधान हैं -

"देव-यजन के पशु यज्ञों की वह पूर्णाहुति की ज्वाला,
जलनिधि में बन जलती कैसी आज लहरियों की माला!'' (चिंता सर्ग)

उस समाज में पशु बलि देकर यज्ञों का आयोजन होता था। धार्मिक अनुष्ठानों में आडम्बरों का आधिक्य था। उनकी मांस, मदिरा-भक्षण की लालसा उनसे यज्ञ-हवन आदि करवाती थी। एक बार की तृप्ति होने के बाद वे नशे में प्रवृत्त होते थे। समाज की यही विध्वन्सकारी प्रवृतियाँ उनके विनाश का कारण बन गयी। कामायनीकार का यह स्पष्ट संदेश है कि एकांगी बुद्धिवाद एवं एकांगी हृदय पक्ष के बल पर समाज नहीं चल सकता। सारस्वत प्रदेश का

समाज आधुनिक समाज की तरह ही कल्पना चित्र है। वह भौतिक दृष्टि से अत्यन्त सम्पन्न होते हुए भी आन्तरिक रूप से अतृप्त-अपूर्ण है उसे कर्तव्य और अधिकार का बोध प्रायः नहीं है। प्रजा का विद्रोह भी इसी कारण हुआ है किसी भी राज्य की प्रथम समस्या व्यक्ति और समाज के आपसी सामंजस्य की होती है। व्यक्ति समाज का ही अंग है। व्यक्तियों से समाज बनता है, समाज से व्यक्ति का व्यक्तित्व विकसित और सुरक्षित होता है।

सांस्कृतिक मूल्य- प्रसाद' का सम्पूर्ण साहित्य सांस्कृतिक चेतना से ओत-प्रोत है। 'कामायनी' महाकाव्य में विशेष तौर पर लोक मंगल की कामना की गयी है। इसमें 'प्रसाद' ने जो भी समस्याएँ उठाई हैं; उनके समाधान भी महाकाव्य में ही अन्तर्निहित हैं। 'कामायनी' में मनु ने श्रद्धा को अपने अतिथि के रूप में स्वीकार किया तथा लम्बे समय तक अपने पास आसरा दिया। उस निर्जन वन में श्रद्धा को सहारा देने के लिए मात्र मनु ही शेष बचे थे। भारतीय संस्कृति में कर्म को प्रधानता दी गई है। कर्म करना हमारा कर्तव्य है। हमें फल की कामना नहीं करनी चाहिए। फल की चिन्ता ईश्वर पर छोड़ देनी चाहिए। यही बात 'कामायनी' में श्रद्धा और इड़ा के माध्यम से समझाई गयी है।

''कर रही लीलामय आनन्द, महाचिति सजग हुई सी व्यक्त;
विश्व का उन्मीलन अभिराम इसी में सब होते अनुरक्त।
काम मंगल से मंडित श्रेय सर्ग, इच्छा का है परिणाम।
तिरस्कृत कर उसको तुम भूल बनाते हो असफल भवधाम।'' (श्रद्धा सर्ग)

पुराना जब समाप्त होगा, तभी नया जन्म लेगा। यह प्रकृति का सनातन नियम है। प्रकृति में हमेशा नया ही पूज्य रहा है। प्रकृति अपना श्रृंगार कभी भी बासी फूलों से नहीं करती है। परिर्वतन ही जीवन है जो इसके साथ आगे नहीं बढ़ता, वह मृत हो जाता है। जीवन की धारा उसे छोड़ आगे बढ़ जाती है इस तरह परिवर्तन ही सत्य है और सत्य ही ईश्वर। 'कामायनी' में इसकी भी चर्चा की गई है- सत्य क्या है? सुन्दर क्या है? चिति का विराट वपु यह-मूर्त विश्व ही सत्य और सुन्दर है।

"अपने दुख-सुख से पुलकित, यह मूर्त विश्व सचराचर;

चिति का विराट वपु मंगल, यह सत्य सतत् चिर सुन्दर।'' (आनन्द सर्ग)

भारतीय संस्कृति के अनुरूप उसमें सभी आदर्श गुण निहित हैं। उसमें अतिथि का आदर करना, अहिंसा पर बल देना, जीव मात्र को सहोदर सम मानना, क्षमाशीलता आदि गुणों का सामंजस्य दिखाया है, जिससे भारतीय संस्कृति का संदेश समस्त संसार में फैले। श्रद्धा के विचार एवं आचरण भारतीय संस्कृति के वसुधैव कुटुम्बकम, अहिंसा, प्रेम तथा प्रकृति के सर्व तत्वों के प्रति आत्मीय भाव का प्रतिनिधित्व करते हैं। अहिंसा परमोधर्मः का संदेश 'ईर्ष्या सर्ग' श्रद्धा के इस कथन से मिलता है-

"अपनी रक्षा करने में जो चल जाय तुम्हारा कहीं अस्त्र;
वह तो कुछ समझ सकी हूँ मैं हिंसक से रक्षा करे शस्त्र।
पर जो निरीह जीकर भी कुछ उपकारी होने में समर्थ;
वे क्यों न जियें, उपयोगी बन इसका मैं समझ सकी न अर्थ।'' (ईर्ष्या सर्ग)

भारतीय संस्कृति का प्रारम्भिक रूप अरण्य संस्कृति के रूप में विकसित हुआ था। मानव जीवन का प्रारंभिक काल अरण्य में ही व्यतीत हुआ है। वहीं से वर्तमान मनुष्य का विकास हुआ है। अतः अरण्य का अपना महत्व है। यदि जंगल ही नहीं रहेंगे तो सृष्टि बच ही नहीं सकती है। 'संत' का अर्थ है सब कुछ छोड़कर आत्म विकास, अध्यात्म विकास के लिए एकान्त साधना मे लीन होकर समाज को एक नयी दिशा देना। हमारे सांस्कृतिक मूल्य विखण्डित न हों, इस हेतु संत नित नये सुझाव देते हैं। 'संत' तथा 'अरण्य' मिलकर संस्कृति को 'ऋषि संस्कृति' का रूप देते हैं। प्रकृति के प्रति कृतज्ञता का भाव रखना तथा इन भावों को रखते हुए अपने कर्तव्यों का निर्वहन करने से प्रकृति और हमारे बीच आत्मीयता बनी रहती है। भारतीय संस्कृति की एक विशेषता 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना के अनुसार सम्पूर्ण संसार एक परिवार के रूप में है। वह सभी जाति एवं धर्मों को समान रूप से सम्मान देती है।

क्षमाशीलता की मूर्ति 'कामायनी' अपनी गलती न होते हुए भी मनु को क्षमा कर उसकी खोज में भटकती है। यही भारतीय संस्कृति के सुदृढ़ मूल्य हैं। आज ये मूल्य विलुप्त

हो रहे हैं। वर्तमान युग में व्यक्ति अपने दोषों को भी दूसरों पर थोपता है। दया-क्षमा-परोपकार जैसे संस्कारों पर स्वार्थ की परतें चढ़ गई हैं। इसी कारण सांस्कृतिक मूल्य विघटित हो रहे हैं। स्वार्थ और अहंकार की प्रबलता के कारण सहनशीलता एवं क्षमाशीलता जैसे मानवीय गुण कहीं विलुप्त होने लगे हैं, जिनसे पति-पत्नी के बीच अलगाव आने लगा है। इसी विघटन के समान्तर 'प्रसाद' ने श्रद्धा का चरित्र खड़ा किया है। भारतीय संस्कृति में धर्म एवं संस्कृति को जोड़कर देखा गया है और मानव धर्म सर्वोपरि माना गया है। यह धर्म-प्रधान संस्कृति उदात्त मानवीय गुणों के पोषण और उनके अनुपालन, कर्तव्य परायणता, उदात्तता, दिव्य मानवीयता तथा दैवीय गुणों को धारण करने पर बल देती है। वह सत्यनिष्ठा, संयम, करुणा, अहिंसा, क्षमा, इन्द्रिय-निग्रह, अक्रोध आदि की आग्रही है। ये सभी बातें धर्म में निहित हैं। भारतीय संस्कृति की समस्त विशेषताओं का उल्लेख 'कामायनी' में मिलता है। इसमें सांस्कृतिक मूल्यों के टूटने और विघटित होने के कारण उत्पन्न संघर्ष तथा उनके समाधान के उपायों की ओर भी संकेत किया है।

नैतिक मूल्य- नैतिकता के आदर्श देवता भी कालान्तर में धीरे-धीरे नैतिक पतन के कारण होने से वे अपनी प्रारम्भिक स्थिति बनाये रखने में असमर्थ रहे। 'कामायनी' के अनुसार उच्छृंखलता, विलासिता की अति से उनके नैतिक मूल्यों का ह्रास हो गया था। इसमें देवताओं को एक विकसित जाति के रूप में लिया गया है जो विकास और समृद्धि के उपरान्त मदमस्त होकर कर्तव्य विमुख हो गई थी -

''भरी वासना-सरिता का वह कैसा था मदमत्त प्रवाह;
प्रलय-जलधि में संगम जिसका देख हृदय था उठा कराह!'' (चिन्ता सर्ग)

उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट होता है कि, देवताओं का कितना नैतिक पतन हो गया था। केवल अपनी अतृप्त वासनाओं को तृप्त करना उनका एकमात्र कार्य रह गया था; जिसका परिणाम प्रलय विनाश के रूप में सामने आया। साधारण मनुष्य द्वारा इस प्रकार का व्यवहार कुछ हद तक क्षम्य हो सकता है, पर यदि हमारे आदर्श माने जाने वाले देवता भी यही आचरण करेंगे तो फिर अच्छाई की क्या पहचान रह जायेगी ? किसी भी व्यक्ति की अच्छाई व बुराई का

आकलन उसकी नैतिकता के आधार पर होता है। जो हम सीखते हैं, जिससे हमें सीख मिलती है; वह हम अगली पीढ़ी के लिए छोड़ते हैं। हमसे ही हमारे संस्कार हमारी अगली पीढ़ियों तक जाते हैं। मनुष्य की एक भूल का प्रभाव आगे बहुत दूर तक जाता है और उसका बहुत बुरा परिणाम आगे की पीढ़ियों को भुगतना पड़ता है। देव सृष्टि के अवशेष मनु को विनाशकारी प्रलय का सामना करना पड़ा, परंतु फिर भी उनकी वे आदतें नहीं बदली उनकी कर्तव्य भावना पर अधिकार भावना हावी हो गई तभी वे श्रद्धा के साथ दाम्पत्य जीवन भी सुखपूर्वक व्यतीत नहीं कर सके। प्रेम का अर्थ सिर्फ अपनी वासनापूर्ति तक सीमित माना। जब श्रद्धा गर्भवती हो गई तो वे गर्भवती के सुख-दुख या सुविधा-असुविधा का ध्यान रखने के स्थान पर अहंकार और ईर्ष्या भाव से भर गये। अशक्त श्रद्धा की विवशता उन्हें दिखाई नहीं दी, जिस कारण वह श्रद्धा को त्याग कर चले गये। श्रद्धा भी क्षण भर की चंचलता के कारण मनु को अपना सर्वस्व समर्पित कर देती है। यदि वहाँ पर उसने अपने भावावेग पर नियंत्रण पा लिया होता तो उसे मनु के परित्याग का सामना न करना पड़ता। 'कामायनी' का प्रारम्भ तथा अन्त नैतिक मूल्यों पर ही आधारित है। प्रारम्भ में नैतिक मूल्यों के पतन के कारण देव सृष्टि का विनाश तथा अन्त में नैतिकता की उत्कृष्टता से मनु को आनन्द की प्राप्ति होती है। नैतिकता की दृष्टि से 'कामायनी' का मनु एक कमजोर चरित्र है। वह बार-बार गिरता रहता है, प्रलय पूर्व के भोग-विलास में वह शामिल है। प्रलय की विभीषिका देखने के बाद भी वह दृढ़ चरित्र नहीं बन पाता। असुर पुराहितों के बहकाने में आकर पालतू पशु की बलि देकर मांस-मदिरा का सेवन करता है। श्रद्धा जैसी नारी को सिर्फ काम-वासना की साधन मात्र समझता है। भावी शिशु के प्रति स्नेह-औदार्य युक्त उत्तरदायित्व के स्थान पर उससे ईर्ष्या करने लगता है। जिस इड़ा की सहायता से उसका जीवन पुनः सुचारू गति से अग्रसर होता है, उसी के साथ मनमानी करना चाहता है। इसी कारण उसे कभी प्रलय का तो कभी 'काम के अभिशाप' का तथा कभी सारस्वत प्रदेश के विद्रोह का सामना करना पड़ता है। यह नया समाज स्वयं भी शाप-ग्रस्त है, क्योंकि इसकी भौतिकवादी भेद बुद्धि मानवता से दूर ले जाती है। वास्तव में नैतिकता की दृष्टि से इड़ा भी

पूर्णतः निष्कलुष इसलिए नहीं मानी जा सकती, कि वह स्वयं पहले भौतिक भोगविलास पूर्ण वातावरण का निर्माण कर मनु की सुषुप्त वासना को जागृत करती है। मनु को सुरा पान करवाती है -

"इड़ा ढालती थी वह आसव, जिसकी बुझती प्यास नहीं,
तृषित कंठ को, पी-पी कर भी, जिसमें है विश्वास नहीं;
वह वैश्वानर की ज्वाला सी, मंच वेदिका पर बैठी;
सौमनस्य बिखराती शीतल, जड़ता का कुछ भास नहीं।" (स्वप्न सर्ग)

अतः मनु के नैतिक पतन का कारण केवल मनु ही नहीं बल्कि इड़ा भी उसमें बराबर की भागीदार है। मदिरा मनुष्य के सोचने की क्षमता को समाप्त कर देती है। इसे ग्रहण करने के पश्चात् व्यक्ति की नैतिक-अनैतिक, अच्छा-बुरा कुछ भी सोचने की क्षमता समाप्त हो जाती है। वह बहकी-बहकी बातें करने लगता है। मनुष्य के अन्दर की दैवी शक्तियाँ कुचली जाती है। मानवता के कुछ शाश्वत मूल्य होते हैं, उनके ही कारण मनु के इस अतिचार का विरोध होता है। सारस्वत नगरवासी मनु की भाँति आधुनिक सभ्यता और सांस्कृतिक प्रदूषण का भी एक प्रमुख कारण मदिरा है। समाज की नैतिक अवनति की कारण बनी इस महामारी की चपेट में गाँव-शहर, अमीर-गरीब सभी हैं। श्रद्धा की क्षणिक चंचलता उसे कष्टों में डाल देती है। यह स्थिति वर्तमान समाज में मुखरित हो चुकी है। आज किशोर एवं किशोरियों में यह स्थिति दिखती है। क्षणिक भावावेश में आकर वे अपने जीवन को तबाह कर देते हैं। अपनी गलती का एहसास उन्हें उस समय नहीं होता है। भौतिक जीवन की चकाचौंध उनको विवेकशून्य बना देती है। उम्र की चंचलता इड़ा जैसी बुद्धिमती को भी चंचल बना देती है और अपने अविवेकी आचरण के कारण आसन्न संकटों को नहीं देख पाती।

पारिवारिक मूल्य- 'कामायनी' में पारिवारिक मूल्य का महत्व भी सूचित है। मनु पारिवारिक महत्व को समझे बिना परिवार को छोड़ कर पलायन कर जाता है। इस पलायन का दुःखी परिणाम उसे सम्पूर्ण कथा में भुगतना पड़ता है। वह सदैव अशान्त और विचलित

रहता है। पारिवारिक मूल्य का महत्व होने पर ही संसार में अन्य सभी मूल्य निर्धारित होते हैं। मानवीय मूल्य, सांस्कृतिक मूल्य, नैतिक मूल्य आदि सभी मूल्यों का आधार परिवार ही है। यदि परिवार से अच्छे संस्कार प्राप्त होते हैं तो व्यक्ति संस्कारित होता है। व्यक्ति-व्यक्ति से समाज सुसंस्कृत बनता है। संस्कार सम्पन्न व्यक्ति के मूल्य भी उच्च होते हैं। 'कामायनी' में इसी बात को विशेष महत्व प्रदान किया गया है। कामायनीकार ने मनु को विघटित मन वाला दिखाया है। मनु का मानसिक विघटन ही उसके नैतिक पतन का कारण बना। श्रद्धा पूर्णतः संस्कार सम्पन्न एवं समर्पित महिला है। उसे अपने परिवार के प्रति विशेष लगाव है। वह अनेक कमियों के बाद भी मनु के प्रति निर्मल निष्कपट प्रेम रखती है तथा समर्पण करती है। श्रद्धा के मन में अपने भावी जीवन के प्रति एक आशा है उसके मन में परिवार के प्रति अपनी एक कल्पना है। मनु का व्यक्तित्व श्रद्धा के व्यक्तित्व से मेल नहीं खाता, वे असन्तुष्ट रहते हैं। प्रारम्भ में परिवार बसाने के प्रति उत्सुकता एवं शीघ्रता के कारण वे पारिवारिक दायित्वों का निर्वाह नहीं कर पाये। इस सम्बन्ध में उतार-चढ़ाव होता रहा है। इन दोनों के दाम्पत्य-जीवन की सुखद शुरूआत कर्म सर्ग से होती है। 'वासना' सर्ग में यद्यपि श्रद्धा ने मनु के वासना विह्वल आत्म समर्पण को स्वीकार कर लिया, तथापि लज्जा की चेतावनी के कारण दैहिक समर्पण के लिये वह तैयार नहीं हो पाती है। कर्म सर्ग में उनका मिलन दिखाया गया है। श्रद्धा व मनु दोनों साथ-साथ रह रहे थे। ईर्ष्या सर्ग में पारिवारिक प्रेम उत्पन्न होता है। श्रद्धा एक आदर्श गृहणी का जीवन व्यतीत करती है। वह एक ओर भावी सन्तति के आगमन की तैयारी करती है, कि उसके आगमन के बाद परिवार पूर्ण होगा और पारिवारिक सुख बढ़ेगा तथा दूसरी ओर अपने पति के आखेट से लौटने की प्रतीक्षा करती है।

''पश्चिम की रागमयी संध्या अब काली है हो चली, किन्तु;
अब तक आये न अहेरी वे क्या दूर ले गया चपल जंतु !
यों सोच रही मन में अपने हाथों में तकली रही घूम ;
श्रद्धा कुछ कुछ अनमनी चली अलकें लेती थी गुल्फ चूम!'' (ईर्ष्या सर्ग)

नारी चित्रण रामधारी सिंह दिनकर के अनुसार-''कामायनी के कवि का ध्येय पाठकों को नारी के उस आभ्यंतर सौंदर्य से परिचित कराना है जो नारी के चर्म और मांस में नहीं, प्रत्युत उसकी आत्मा में बसता है। जो वासना नहीं, अर्चना का विषय है। जिससे पुरुष भोग और तृप्ति नहीं, प्रेरणा और स्फुरणा की प्राप्ति करता है। जिसे छूने की इच्छा तो जगती है, किन्तु उस इच्छा का पर्यवसान स्पर्श नहीं स्फूर्ति में होता है।'' 'प्रसाद' ने 'कामायनी' में नारी के दोनों रूपों का समन्वय दिखाया है। दोनों नारियाँ अपने-अपने क्षेत्र की आदर्श हैं। दोनों का व्यक्तित्व एक दूसरे से भिन्न है। इड़ा का व्यक्तित्व प्रतिभाशाली, तेजस्वी, दृढ़ संकल्पवान तथा भौतिकतावादी आदि गुणों से सम्पन्न है तो दूसरी ओर श्रद्धा दया, माया, ममता जैसे मानवीय गुणों का भण्डार है। नारी में ये दोनों प्रवृत्तियाँ आज भी इसी भाँति प्रकट होती हैं। आधुनिक युग के नारी आन्दोलनों ने नारी के इड़ा रुप को उद्घाटित करने के प्रयास किये हैं। सामाजिक-राजनैतिक क्षेत्रों में कार्य कर रही नारी इस रुप में स्वयं को विकसित भी कर रही है, किन्तु फिर भी अधिकांश नारियाँ अभी भी श्रद्धा रुप में ही हैं। उसके प्रति पुरुष का दृष्टिकोण मनु से भिन्न नहीं है। ये दोनों नारी पात्र 'कामायनी' की समस्या को आधुनिक बना देते हैं। सामाजिक अर्थ में यदि हम इसे देखें तो यह वर्तमान पूँजीवादी मध्यवर्ग की समस्या है। एक ओर श्रद्धा हृदय की एवं इड़ा बुद्धि की प्रतीक है, तो दूसरी ओर दोनों भारतीय नारी की आदर्श कल्पना तथा आधुनिक युगीन बुद्धिवादी नारी का प्रतिनिधित्व भी करती हैं। इड़ा के माध्यम से आधुनिक नारी का रूप प्रकट होता है तो बुद्धिवाद, भोगवाद और एक पक्षीय महत्वाकांक्षाओं के दुष्परिणाम भी प्रकट होते हैं। कवि ने श्रद्धा के चरित्रांकन के साथ इड़ा के स्वभाव को भी परिवर्तित होता दिखाया है। उसका विनम्र होना और आध्यात्मिक मार्ग का अनुसरण करना कवि की दृष्टि में आदर्श अभीष्ट है। प्रकृति ने नर और नारी को एक-दूसरे के विपरीत गुणों से युक्त बनाकर उन्हें एक-दूसरे के पूरक भी बनाया है। दोनों परस्पर मिलकर ही पूर्णता को प्राप्त होते हैं। प्रकृति ने दोनों को समान अधिकार दिये हैं, किंतु मनुष्य समाज में सभ्यता के विकास के साथ-साथ ये सम्बन्ध समान न रह कर अधिकार और अधिकारी के रुप में परिणत हो गये। वैदिक साहित्य देखने पर पता चलता है

कि उस युग में स्त्री स्वतंत्र, स्वावलम्बी और समान अधिकारिणी थी, किंतु बाद के युगों में धीरे-धीरे उसका शोषण बढ़ता गया और वह पुरुष के भोग-विलास की साधन या रक्षणीया सम्पत्ति मात्र बनकर रह गई। 'कामायनी' के नारी विमर्श पर प्राचीन और आधुनिक दोनों युगों का प्रभाव दिखाई देता है।

इच्छा-क्रिया ज्ञान में विभेद- 'कामायनी' की रचना के मूल में मानवता के विकास की प्रेरणा रही होगी। यह कोरी कथा ही नहीं है, वरन् यह समूचे मानवीय अस्तित्व को शाश्वत सत्य से जोड़ने का प्रयास किया है। कवि श्रद्धा, मनु एवं इड़ा के सहयोग से ही मानवता के विकास को सार्थक मानते हैं, और इच्छा, ज्ञान तथा कर्म के सामंजस्य से ही जीवन को सार्थक मानते हैं। इसी को उन्होंने अपने इस महाकाव्य में सम्यक सिद्ध किया है। सामाजिक, राजनैतिक, पारिवारिक आदि कलहों के चलते जीवन में स्थिरता सम्भव नहीं हो पाती है। यदि अच्छे विचार दिमाग में नहीं आयेंगे तो कर्म अच्छे नहीं हो सकते। सर्वप्रथम मानसिक शान्ति अति आवश्यक है। हम भ्रमित से घूम रहे हैं। हमें जीवन की वास्वविकता के मायने ही पता नहीं होंगे तो हम जीवन का उद्देश्य भी नहीं समझ सकेंगे। हमारा मन यदि शान्त हो तो दिमाग में अच्छे विचार आते हैं जिससे हम अच्छा ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। यही सद्ज्ञान हम दूसरों को दे सकते हैं। इच्छा-क्रिया और ज्ञान इन तीनों का विभेद ही श्रापित समाज को जन्म देता है। जीवन का सत्य जानने हेतु इन तीनों का विभेद दूर करना अति आवश्यक है। मानव मन विचलित रहता है। इसमें परिवर्तनशील विचार आते रहते हैं। सुविचारों को स्थिर रखने से एक अच्छा समाज विकसित होता है।

देव सृष्टि और अधुनातन समाज- 'कामायनी' में देव सृष्टि को विलासी प्रवृत्तियों में व्यस्त दर्शाया गया है। उसके द्वारा मांस-मदिरा का सेवन में प्रवृत्त तथा नारी के प्रति वासना पूर्ण दृष्टि के साथ ही कर्तव्य के प्रति उदासीन दिखाया गया है। देव समाज में चारों ओर अराजकता व्याप्त थी। देवता अत्यन्त सशक्त थे, उनकी सेनाएं संगठित होकर चलती थी तो धरती काँप उठती थी और विजय उनके चरण चूमती थी। देवताओं के वैभव और ऐश्वर्य की सीमा नहीं थी। उनके साम्राज्य में नित्य ही उत्सव हुआ करते थे। उनके विशाल भवन मणि-

दीपों से कांतिमान रहते थे। प्रकृति भी उनसे परास्त होकर उनके सामने नत मस्तक थी। वे नित्य ही आनन्द में लीन रहते थे। सृष्टि का शाश्वत नियम है कि किसी भी चीज की अति ही उसके विनाश का कारण बनती है यही बात देव सृष्टि पर भी लागू होती है। भोग-विलास की अतिशयता देवताओं के अंत का कारण बनी। देव जाति का इतिहास भी इस कथन को प्रमाणित करता है।

काम का अभिशाप और अधुनातन समाज- 'कामायनी' में वर्णित कथा में अधुनातन समाज की झलक दिखाई देती है। विशेषतः देव-सृष्टि की प्रलय पूर्व स्थिति तथा श्रद्धा के परित्याग के बाद मनु तथा सारस्वत नगर के वृत्तान्त में आधुनिक-उत्तर आधुनिक प्रवृतियाँ प्रतिबिम्बित होती हैं। श्रद्धा का परित्याग करने के पश्चात् मनु जब अकेले रह जाते हैं तो उनका मन पुनः अतृप्त रहता है। उस अकेलेपन एवं अतृप्ता की अवस्था में उन्हें इड़ा मिल जाती है। इस समय मनु अध्यात्म को छोड़कर बुद्धिवाद की ओर आकर्षित होने लगता है। आज का मानव भी आत्मिक विकास की ओर ध्यान न देकर भौतिक विकास की ओर अधिक ध्यान दे रहा है। श्रद्धा रूपी हृदय-गुणों की अवमानना करने के कारण काम मनु तथा उसके भावी समाज के लिए जो भविष्यवाणी करता है, वह मानो आज के मनुष्य के लिये ही है। श्रद्धा के प्रति मनु का व्यवहार काम को बहुत खिन्न कर देता है; जिससे उसके मुँह से मनु के लिए शाप निकला। श्रद्धा की तरह ही वर्तमान नारी भी भोलेपन में पुरूष के प्रेम में पड़कर अपने को समर्पित कर देती है। मनु की प्रवृत्ति के रूप में पुरूष प्रवृत्ति वर्तमान में भी अनेक चिन्तनीय घटनाओं को जन्म देती है।

उपसंहार- 'कामायनी' में अनेक छंदों का प्रयोग किया गया है। जिसमें कामायनीकार द्वारा स्वनिर्मित छन्द भी है। अलंकारों की तो छटा ही निराली है जिसमें उपमा, रुपक, उत्प्रेक्षा, संदेह जैसे अनेक अलंकारों का प्रयोग किया गया है। एक ही छन्द में कई बार अनायास अनेक अलंकार आ जाते हैं। 'कामायनी' में सभी रस उपलब्ध हैं। 'कामायनी' में वर्णित समाज की तुलना अधुनातन समाज से की गई है, जिसके अन्तर्गत राजनैतिक, सामाजिक, पारिवारिक एवं सांस्कृतिक आदि व्यवस्थाओं का वर्णन किया गया है।

सन्दर्भ सूची

1. प्रसाद, जयशंकर (2001) 'कामायनी' भारत प्रकाशन, अलीगढ़
2. कुमार, महेन्द (1965) "कामायनी एक परिशीलन" रामचन्द्र गुप्त रीगल बुक डिपो, नई दिल्ली
3. त्यागी, सुरेश चन्द्र (1976) "छायावादी काव्य में सौन्दर्य दर्शन" अनुराधा प्रकाशन, मेरठ
4. तिवारी, रमाशंकर (1973) "कामायनी प्रेरणा और परिपाक" ग्रन्थक प्रकाशन रामबाग, कानपुर
5. नवल, नन्द किशोर (2007) "कामायनी परिशीलन" अनुपम प्रकाशन, पटना
6. पाराशर, इन्दुप्रभा (1990) "प्रसाद साहित्य में मनोभावों के स्वरूप" नन्द नन्दन प्रकाशन, लखनऊ
7. प्रेमशंकर (1994) "प्रसाद' का काव्य" राधाकृष्ण प्रकाशन, अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली
8. बाली, तारकनाथ (1972) "कामायनी की टीका" विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
9. भारद्वाज, शिवप्रसाद (1990) "कामायनी सटीक" अशोक प्रकाशन, दिल्ली
10. मुक्तिबोध, गजानन माधव (1997) "कामायनी एक पुनर्विचार" राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
11. गुप्त, सुशीला (1981) "आधुनिक हिन्दी काव्य में प्रवृत्तिमूलक दार्शनिकता" लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
12. शर्मा, हरिचरण (2005) "कामायनी विमर्श" मलिक एण्ड कम्पनी, जयपुर
13. हरदयाल (1979) "आधुनिक बोध और विद्रोह" राजेश प्रकाशन, दिल्ली

डॉ. दिनेश कुमार गुप्ता

सहायक आचार्य, अग्रवाल महिला शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय,

गंगापुर सिटी (राजस्थान) 322201

दूरभाष संख्या-9462607259

mail: dineshg.gupta397@gmail.com